

CHAPTER 43

PHILOSOPHY

Doctoral Theses

01. भारती (भारत कुमार)
सुत्त-पिटक में वर्णित महिलाओं की सम्यक् स्थिति : एक दार्शनिक विश्लेषण।
निर्देशिका : डॉ. सुवासिनी वारिक
Th 25144

सारांश
(असत्यापित)

प्रस्तुत शोध प्रबंध पालि साहित्य विशेषकर सुत्तपिटक में महिलाओं की स्थिति को व्यक्त करता है। इस शोध प्रबंध में यह अन्वेषित करने करने का प्रयास किया गया है कि जिस नारी ने सम्पूर्ण मानव/मानवता का सृजन किया, मनुष्य को मानवीय आकार प्रदान किया, उसे ही समाज एवं धर्मों ने कैसे मानवता की मुख्य धारा से बाहर कर दिया और उसके जीवन को दुःखमय और गौणमय बनाकर इतिहास में दर्ज कर दिया? इसके साथ ही यह भी जानने का प्रयास किया गया है कि क्या पालि साहित्य अथवा बौद्ध-दर्शन नारी को अधिनता की बेड़ियों से मुक्त करने में सकारात्मक भूमिका का निर्वहन करता है? भारतीय प्राचिन इतिहास के अध्ययन एवं अनुशीलन से ज्ञात होता है कि, मानवता के आरम्भिक चरणों से लेकर जैन काल तक नारी-जीवन अनेक उतार-चढ़ाव से भरा रहा है। परंतु बौद्ध दर्शन में नारी अपनी सम्पूर्ण बेड़ियों को तोड़कर निर्वाण को प्राप्त करती दिखाई देती है, जैसे हाथी अपने सभी बेड़ियों को तोड़कर मुक्त हो जाता है। सुत्तपिटक में नारी सिर्फ पुरुष की बराबरी ही नहीं करती, बल्कि स्त्री-पुरुष के भेद से उपर उठकर स्वयं को एक चेतन प्राणी या मानव के रूप में स्थापित करने में सफल दिखाई देती है। जब मार, भिक्खुनी सोमा से यह कहता है कि मात्र दो उंगली प्रज्ञा (दो उंगुलियों के बीच चावल/भात के कुछ दानों को दबाकर देखना) वाली स्त्री कैसे निर्वाण प्राप्त कर सकती है, तब सोमा मार को उत्तर देती हुई कहती है कि इत्थिभावों नो कि कयिरा, चित्तमिह सुस्माहितो। जाणमिह वत्तमानमिह, सम्मा धम्मं विपस्तो॥

विषय सूची

1. पूर्व-बुद्ध काल में महिलाएं : एक अध्ययन 2. प्रथम चार पालि निकायों में महिलाओं की स्थिति : एक अनुशीलन 3. खुद्दकनिकाय : नारी स्वतंत्रता एवं दार्शनिक उद्गार 4. वैश्विक परिदृश्य में बौद्ध नारी-दर्शन की प्रासंगिकता उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

01. HAMDO (Manhal Rashid)
The Nature and Epistemic Role of Intuition in Contemporary American Analytical Philosophy: An Analytic Study.
Supervisor : Dr. Nilanjan Bhowmick
Th25142

Abstract
(Verified)

This work is an attempt to investigate the nature of intuitions demonstrating how philosophers can best use them in epistemology. First, I consider a number of paradigmatic thought experiments in epistemology that depict the appeal to intuition and demonstrate that the nature of thought experiment-generated intuitions is not best explained by an a priori Platonism. Second, I develop and argue for a thin conception of what epistemic intuitions are. This account maintains that intuition is neither a priori nor a posteriori but multidimensional, an intentional but non-propositional mental state, non-conceptual and non-phenomenological in nature, which is individuated in virtue of its progenitor, namely, thought experiment. Third, I provide an argument for the evidential status of intuitions based on the correct account of the nature of epistemic intuition. The suggestion is the fitting-ness approach: intuition alone has no epistemic status. Intuition has evidentiary value as long as it fits well with other pieces into a whole namely, thought experiment. Finally, I address the key challenges raised by supporters of anti-Centrality according to whom philosophers do not regard intuition as central evidence in philosophy. To that end, I respond to them showing that they fail to affect the account of intuition developed in this dissertation.

Contents

1. Epistemic thought experiment and intuition 2. The nature of epistemic intuition 3. Experimental status of intuitions 4. Epistemic intuition of intuition deniers. Conclusion and Bibliography.

02. MITTAL (Palak)

Concept of Sexuality: Feminist Theory and Alternative Perspectives.

Supervisor : Dr. Balaganapathi Arakonda

Th25140

Abstract
(Not verified)

A fundamentally different approach and point of view on sexuality to that of the feminists can be seen in Freud, Gandhi, and Illich. It will be the attempt of this thesis to consider, compare and contrast their points of view on sexuality with those of key thinkers in feminist theory. This thesis will make an attempt to contrast and compare the viewpoints of the feminist thinkers on Sexuality with that of Freud, Gandhi and Illich. In an attempt to determine the nature of relationship between the sexes, the feminist movement has thrown up questions to have an understanding of gender relations in the context of sexuality. These debates bring to the fore formulation of the concept of sexuality and its implication for an understanding of the equality between the sexes, which will be compared with Freud, Gandhi and Illich's views on sexuality

Contents

1. Introduction 2. The concept of desire: Freud and the feminists 3. The concept of brahmacharya: Gandhi and the feminists 4. The concept of gender: Illich and the feminists. Conclusion and Bibliography.

04. पाटीदार (दिनेश)
प्रमाण और प्रमेय की पौर्वापर्यता का अध्ययन।
 निर्देशिका : प्रो. काञ्चना नटराजन
Th 25143

*सारांश
 (सत्यापित)*

यह अध्ययन प्रमाण द्वारा प्रमेय की स्थापना करने वाले प्रमाणमीमांसीय सिद्धान्त और प्रमेय द्वारा प्रमाणमीमांसा की स्थापना करने वाले सिद्धान्त में पौर्वापर्यता को देखने और उनकी सदयुक्तता पर विचार पर केन्द्रित है। इस विचार की दृष्टि 'लोक और शास्त्र' की है। अर्थात् लोक और शास्त्र के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए प्रमाण-जन्य प्रमाणमीमांसा और प्रमेय-जन्य प्रमाणमीमांसा पर विचार किया गया है। वैतंडिकों द्वारा प्रमाणमीमांसा के मूल अर्थात् प्रमाण को ही खंडन का विषय बनाया है, और अवांतर रूप से प्रमेयों को भी। आचार्य नागार्जुन, जयराशि भट्ट और श्रीहर्ष ने प्रमाण की स्थापना को असिद्ध कर दिया है। और यदि यह स्थापना प्रमेयों के आधार पर की जाती है तो ऐसा करके भी उन प्रश्नों से, समस्याओं से नहीं बचा जा सकता, जो प्रमाण को ज्ञानमीमांसा का आधार स्वीकार करने पर खड़ी होती हैं। न्याय दार्शनिक प्रमाण के आधार पर सभी कुछ की सिद्धि स्वीकारते हैं, और कई प्रकार की युक्तियों के आधार पर प्रमाण को स्थापित करने की चेष्टा करते हैं। स्थापित करने के इन सभी ढंगों में लोकव्यवहार या लोकानुभव का सहारा प्रचुरता से लिया गया है। ऐसा ही प्रमेय के आधार पर ज्ञानमीमांसा को स्थापित करने वाले बौद्ध नैयायिकों के यहाँ भी है, जो कि लोकानुभव के स्वरूप के विश्लेषण या स्वसंवेदन से हुए प्रतिबिंबन की सहायता से प्रमाणोत्तर प्रमेयों की सिद्धि करने की चेष्टा कर रहे हैं। इन दोनों ही स्थापनाओं के ढंग में हमने समस्याओं को रेखांकित किया है। लोक में निश्चयता का अवगमन करने वाले प्रमाण के अधिशासन में व्यवहार नहीं चलता, इसलिए लोकव्यवहार के आधार पर शास्त्रीय ढंग से खोजी जाने वाली निश्चयता को प्राप्त नहीं किया जा सकता। प्रमाणमीमांसा की स्थापना जनित कठिनाई वस्तुतः लोक के स्वरूपगत अनिश्चयता में ही निहित हैं।

विषय सूची

1. प्रस्तावना 2. प्रमाण-प्रमेय-मीमांसा की स्थापना जनित कठिनाइयाँ 3. प्रमाणजन्य ज्ञानमीमांसीय स्थापनातंत्र पर विचार 4. प्रमेयजन्य ज्ञानमीमांसीय स्थापनातंत्र पर विचार 5. निष्कर्ष। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

05. SINGH (Nisha)
Examination of the Moral Component of Beauty in the Light Of Kantian Aesthetics.
 Supervisor: Prof. Balaganapathi Devarakonda
Th25141

Contents

1. Introduction 2. Brief survey of the evolution of aesthetics 2. Characteristic features of kantian morality in the groundwater of metaphysics of morals and the critique of practical reason 3. Kant's relevance in aesthetics with reference to the critique of judgment 4. Contemporary debates in the domain of aesthetics and morality. Conclusion. References and bibliography.

06. व्यास (आशुतोष)

श्रुति, युक्ति, अनुभव : भारतीय दर्शन में दर्शन की अवधारणा का पुनरीक्षण।

निर्देशिका : प्रो. काञ्चना नटराजन

Th 25145

सारांश
(सत्यापित)

भारतीय दर्शन को प्रयोजनपरक बनाने वाली अवधारणा को प्रश्नगत करते हुए यह शोध, भारतीय दर्शन में दर्शन के स्वरूप को उपादान या प्रस्थान या आधार के माध्यम से देखने का प्रस्ताव प्रस्तुत करता है उपादान का प्रश्न दर्शन के स्वरूप से सम्बन्धित है। सम्बन्धपरक वैचारिक प्रक्रिया होने के कारण दर्शन के पास कोई प्राकृतिक महत्तर आधारवाक्य नहीं है और न ही गणित की तरह स्वयंसिद्ध सूत्र, जिससे वह इस खाई को निश्चित रूप से (प्रामाणिकतः) पाट दे। दार्शनिक को महत्तर आधारवाक्य स्वयं खोजना है, खोजने से अधिक बनाना या तय करना है। खोजने और तय करने की इस प्रक्रिया में किसी दर्शन को विशेष स्वरूप प्राप्त होता है, और भारतीय दर्शन में दर्शनों के साथ भी यही स्थिति है। शोध में प्रयोजनपरक अभिमत को भारतीय दर्शन और भारतीय दर्शन प्रणालियों, दोनों के लिए दोषग्रस्त बताया गया है, और यह भी कि यह भारतीय दर्शन की विविधता को नकार प्रतीत होता है। प्रस्थान या उपादान के रूप में भारतीय दर्शन में श्रुति और अनुभव को विचारा गया है, और यह भी कि युक्ति दार्शनिक प्रश्नों को बनाने और सुलझाने में आवश्यक होती है। नहीं तो दार्शनिकता का समावेश नहीं माना जा सकता है। दर्शन दूसरों के अनुभव का विशिष्टीकरण और स्वयंके अनुभव का सामान्यीकरण करने की वैचारिक-प्रक्रिया है, और इसी वैचारिक-प्रक्रिया का एक और रूप तथ्य और विश्वास के मध्य प्रतीत होने वाली खाई को जानना और क्या यह खाई पाटी जा सकती है, यदि हाँ तो कैसे? इन प्रश्नों का उत्तर खोजना है। इन्हीं विचारों के आधार पर भारतीय दर्शन के उपादानों की चर्चा करता यह शोध कार्य वैतण्डिकों पर विचार करते हुए पाता है कि वैतण्डिकों को भी इस तरह की दृष्टि से देखा जा सकता है, सम्भावनाओं से प्रारम्भ यह शोध प्रस्तावना पर समाप्त होता है, यही इसकी उपादेयता और प्रासंगिकता है।

विषय सूची

1. भूमिका 2. दर्शन की अवधारणा 3. भारतीय दर्शन की अवधारणा : विचार और मूल्यांकन 4. श्रुति, युक्ति, अनुभव : अवधारणात्मक विवेचन 5. उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।